1960F Seth Mohan Lal Ji (of Khurai)

Seth Mohan Lal Ji (In Sanmati Sandesh, 1960)

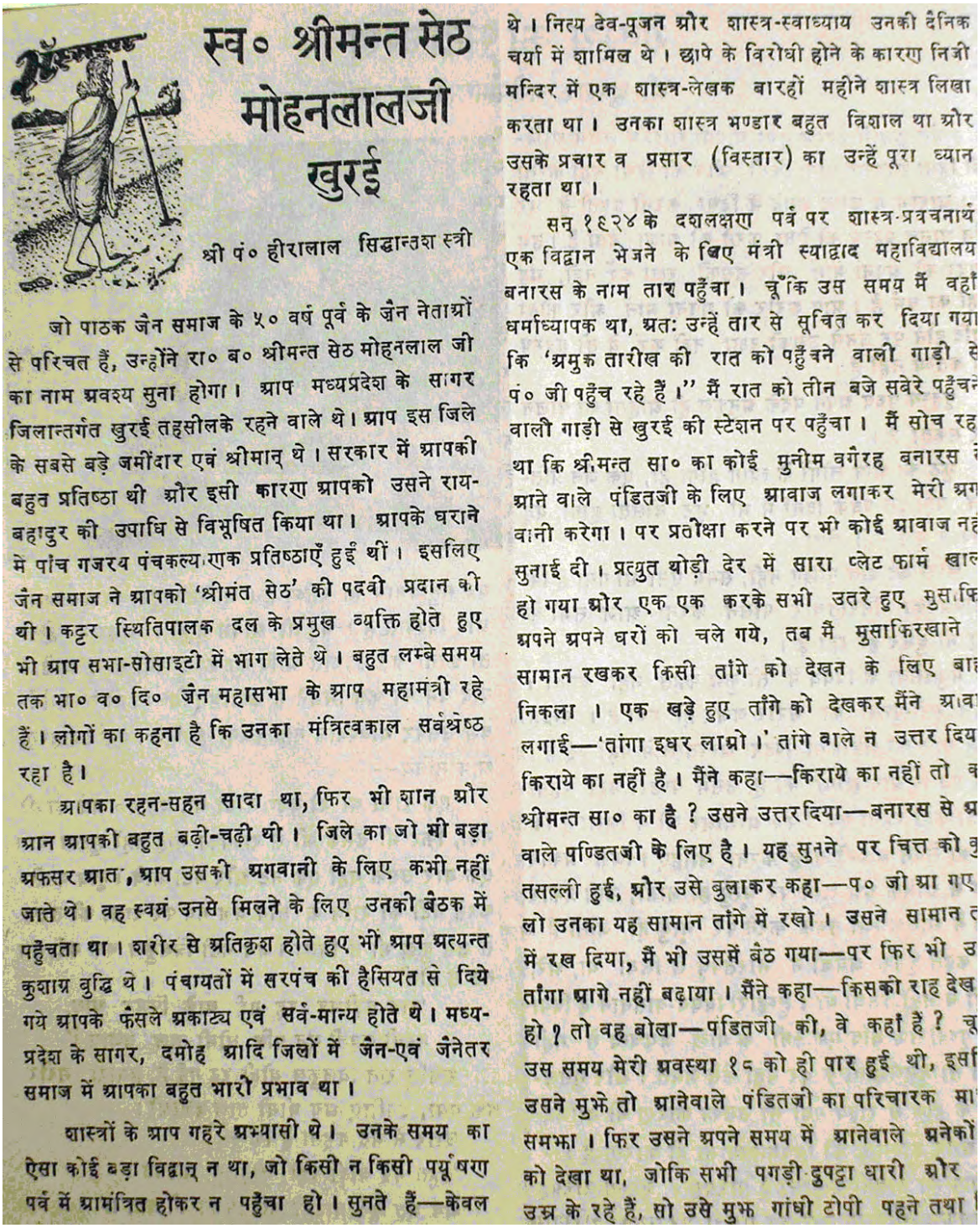

स्व० श्रीमन्त सेठ मोहनलालजी खुरई

श्री पं० हीरालाल सिद्धान्तशास्त्री

जो पाठक जैन समाज के ५० वर्ष पूर्व के जैन नेताओं से परिचत हैं, उन्होंने रा० ब० श्रीमन्त सेठ मोहनलाल जी का नाम अवश्य सुना होगा। आप मध्यप्रदेश के सागर जिलान्तर्गत खुरई तहसीलके रहने वाले थे। आप इस जिले के सबसे बड़े जमींदार एवं श्रीमान् थे। सरकार में आपकी बहुत प्रतिष्ठा थी और इसी कारण आपको उसने राय-बहादुर की उपाधि से विभूषित किया था। आपके घराने मे पांच गजरथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएँ हुई थीं। इसलिए जैन समाज ने आपको 'श्रीमंत सेठ' की पदवी प्रदान की थी। कट्टर स्थितिपालक दल के प्रमुख व्यक्ति होते हुए भी आप सभा-सोसाइटी में भाग लेते थे। बहुत लम्बे समय तक भा० व० दि० जैन महासभा के आप महामंत्री रहे हैं। लोगों का कहना है कि उनका मंत्रित्वकाल सर्वश्रेष्ठ रहा है।

आपका रहन-सहन सादा था, फिर भी शान और आन आपकी बहुत बढ़ी-चढ़ी थी। जिले का जो भी बड़ा अफसर आता, आप उसकी अगवानी के लिए कभी नहीं जाते थे। वह स्वयं उनसे मिलने के लिए उनकी बैठक में पहुँचता था। शरीर से अतिकृश होते हुए भी आप अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि थे। पंचायतों में सरपंच की हैसियत से दिये गये आपके फैसले अकाट्य एवं सर्व-मान्य होते थे। मध्य-प्रदेश के सागर, दमोह आदि जिलों में जैन-एवं जैनेतर समाज में आपका बहुत भारी प्रभाव था।

शास्त्रों के आप गहरे अभ्यासी थे। उनके समय का ऐसा कोई बड़ा विद्वान् न था, जो किसी न किसी पर्यूषण पर्व में आमंत्रित होकर न पहुँचा हो। सुनते हैं—केवल थे। नित्य देव-पूजन और शास्त्र-स्वाध्याय उनकी दैनिक चर्या में शामिल थे। छापे के विरोधी होने के कारण निजी मन्दिर में एक शास्त्र-लेखक बारहों महीने शास्त्र लिखा करता था। उनका शास्त्र भण्डार बहुत विशाल था और उसके प्रचार व प्रसार (विस्तार) का उन्हें पूरा ध्यान रहता था।

सन् १९२४ के दशलक्षण पर्व पर शास्त्र-प्रवचनार्थ एक विद्वान भेजने के लिए मंत्री स्याद्वाद महाविद्यालय बनारस के नाम तार पहुँचा। चूँकि उस समय मैं वहाँ धर्माध्यापक था, अतः उन्हें तार से सूचित कर दिया गया कि 'अमुक तारीख की रात को पहुँचने वाली गाड़ी से पं० जी पहुँच रहे हैं।" मैं रात को तीन बजे सवेरे पहुँचने वाली गाड़ी से खुरई की स्टेशन पर पहुँचा। मैं सोच रहा था कि श्रीमन्त सा० का कोई मुनीम वगैरह बनारस से आने वाले पंडितजी के लिए आवाज लगाकर मेरी अगवानी करेगा। पर प्रतीक्षा करने पर भी कोई आवाज नहीं सुनाई दी। प्रत्युत थोड़ी देर में सारा प्लेट फार्म खाली हो गया और एक एक करके सभी उतरे हुए मुसाफिर अपने अपने घरों को चले गये, तब मैं मुसाफिरखाने का सामान रखकर किसी तांगे को देखन के लिए बाहर निकला। एक खड़े हुए तांगे को देखकर मैंने आवाज लगाई—'तांगा इधर लाओ।' तांगे वाले न उत्तर दिया किराये का नहीं है। मैंने कहा—किराये का नहीं तो क श्रीमन्त सा० का है? उसने उत्तरदिया—बनारस से आ वाले पण्डितजी के लिए है। यह सुनने पर चित्त को कु तसल्ली हुई, और उसे बुलाकर कहा—प० जी आ गए लो उनका यह सामान तांगे में रखो। उसने सामान त में रख दिया, मैं भी उसमें बैठ गया—पर फिर भी उ तांगा आगे नहीं बढ़ाया। मैंने कहा—किसकी राह देख हो? तो वह बोला—पंडितजी की, वे कहाँ हैं? चू उस समय मेरी अवस्था १८ को ही पार हुई थी, इसल उसने मुझे तो आनेवाले पंडितजी का परिचारक मा समझा। फिर उसने अपने समय में आनेवाले अनेकों को देखा था, जोकि सभी पगड़ी-दुपट्टा धारी और उम्र के रहे हैं, सो उसे मुझ गांधी टोपी पहने तथा

खोलकर लेट गया।

प्रातःकाल सर्व प्रथम स्व० सेठ हीरालाल जी सेठी से भेंट हुई, मैं निवृत्त होकर मन्दिर जी पहुँचा, उनके ही साथ पूजनादि की। चूंकि वह धर्म का प्रथम दिवस था।

अतः पूजन समाप्त होने के पश्चात् शास्त्र-पूजन प्रारंभ हो गई और तत्पश्चात् श्री सेठी जी ने मुझे गद्दी पर बैठ कर शास्त्र--प्रवचन के लिए कहा।

यहाँ यह बता देना आवश्यक है, कि इसके पूर्व न मैं कभी खुरई ही गया था और न कभी श्रीमन्त सा० के ही दर्शन हुए थे; अतः गद्दी पर बैठते हुए मैंने सेठी जी से अपना अभिप्राय व्यक्त किया। वे बोले, जब श्रीमन्त सा० आयेंगे, तब मैं इशारा कर दूँगा, वे आकर इस स्थानपर बैठेंगे। नियत समय पर श्रीमन्त सा० आए और एक तेज निगाह मुझकर डालकर अपने नियत स्थान पर बैठ गए। मैंने पहला दिन होने से तत्त्वार्थसूत्र के प्रथम अध्याय पर पूरे तीन घन्टे प्रवचन किया, मगर श्रीमन्त सा० आँख मूंदे ही बैठे रहे—मानो जैसे सो रहे हों। मुझे उनके इस प्रकार बैठे रहने से कुछ झुंझलाहट तो जरूर हुई, मगर अपना प्रवचन जारी रखा और जब प्रवचन समाप्त हुआ तो सेठी जी अपने घर भोजन को लिवा ले गए।

इस प्रकार क्रमशः तीन दिन व्यतीत हो गए। श्रीमन्त सा० से न घर पर ही भेंट हुई और न शास्त्र-सभा में ही कोई बात-चीत हुई। मुझे मनमें यह खटका तो जरूर, मगर उसका कोई समाधान नहीं हो सका। तीसरे दिनका भोजन श्रीमन्त सा० के ही यहाँ था, अतः जब मैं भोजन करने गया, तब तक भी कोई बातचीत श्रीमन्त सा० से नहीं हुई। जब मैं भोजन करके चौकेसे उठकर बाहर आने लगा, तब श्रीमन्त सा० बोले—पंडितजी! जरा बैठक में रहिए, मैं अभी आता हूँ। मैं बैठक में बैठकर उनकी प्रतीक्षा करने लगा। थोड़ी देर में श्रीमन्त सा० आए और आते ही उन्होंने कलरैया जी को (स्व० बैरि० जमनाप्रसाद जी के पिताजी जो कि उन दिनों उनके यहाँ मुनीम थे) आवाज लगाई, तत्पश्चात् उन्होंने मेरी जाति, जन्म-स्थान आदि के बाबत पूछा, अध्ययन कहां पर किया, आदि की कुछ बातें पूछीं। पुनः उन्होंने तांगेवाले की बात सुनाई। है। फिर, पहले दिन शास्त्र-सभा में उसकी बताई हुई हुलिया में आपको देखा, तो विचार में पड़ गया कि "कहना व्यर्थ है, क्यों पगड़ी की इज्जत जावे" यह कहते हुए वे बोले—हमारे यहाँ पगड़ी और दुपट्टा पहनकर ही कोई शास्त्र-सभा की गद्दी पर शास्त्र-प्रवचन कर सकता है। आज तक कोई भी व्यक्ति टोपी लगाकर गद्दी पर नहीं बैठा है। सो मैंने सोचा कि उम्र तो इनकी नई दिख ही रही है और यदि पंडिताई भी टोपी के ही लायक हुई, तो फिर क्यों बेचारी पगड़ी की इज्जत खराब की जाए। पर मैं तीन दिन से आपके प्रवचन सुन रहा हूँ। आपका शास्त्र अभ्यास तो बहुत अच्छा है। इसलिए यदि आपको कोई ऐतराज न हो, तो आज से आप पगड़ी दुपट्टा पहनकर बैठा करें। मैंने कहा—मुझे कोई ऐतराज नहीं, पर···इतना ही मैं कह पाया कि सामने से श्री कलरैया जी एक पगड़ी और दुपट्टा लेकर आ पहुँचे। श्रीमंत सा० का इशारा पाते ही उन्होंने मेरे सिर पर पगड़ी बांध दी। मैंने कहा—श्रीमन्त सा० मैं केवल गद्दी पर ही इसे पहिनूँगा। बोले—ठीक है।

इस दिन के पश्चात् से वे शास्त्र-सभा में भी शंकाएं करने लगे और बैठक में बुलाकर भी चर्चा करने लगे। एक दिन चर्चा चल रही थी, कि अमुक जैन घराने की विधवा बहु मुसलमान के साथ भाग गई है, तो श्रीमंत सा० बोले—क्या कोई जैन विधुर भी उसे रखने के लिए नहीं मिला? मैंने छूटते ही कहा—श्रीमंत सा० आप तो पुरानी परम्परा के पक्षपाती हैं, यह बात कैसी कही? बोले—एक मुसलमान के यहाँ जाकर, शराब-कबाब खाने और उनकी औलाद बढ़ाने की अपेक्षा तो यह बहुत अच्छा होता—जो किसी विनैकिया (दस्सा) जैनी के यहाँ ही रह जाती। मैं विधवा-विवाह का विरोधी हूँ, क्योंकि विधवा का विवाह नाजायज है, किन्तु यदि कोई विधवा ब्रह्मचर्य पालन करने में असमर्थ है, तो उसे किसी सजातीय के घर बैठ जाने में कोई हर्ज नहीं है।

उन दिनों श्री० स्व० जमनाप्रसाद जी कलरैया सरकारी सर्विस में नहीं आये थे और खुरई में ही प्रैक्टिस करते थे। एक दिन वे मुझे भोजन का निमंत्रण देने आए

घर भोजन के लिए ले जाने लगे—तो श्रीमंत सा० बोले—बाबू जी! पंडितजी को कहाँ लिवाये जा रहे हो ? वे बोले—भोजन कराने के लिए घर लिवाये जा रहा हूँ ? श्रीमंत सा० बोले—निमंत्रण भी दे गये थे ? श्री कलरैयाजी बोले—कल कह गया था न आपसे ? श्रीमंत सा० बोले—बाबूजी, याद कीजिए—क्या कह गये थे ? यही न, कि कल हम और पंडितजी साथ भोजन करेंगे। सो चलो—हमारे चौके में और पंडितजी के साथ भोजन करो, इतना कहकर और उनका हाथ पकड़कर उन्हें चौके में लिवा ले गये। श्री कलरैयाजी ने बहुत कुछ सफाई दी कि मेरा मतलब तो पंडितजी को अपने घर पर जिमाने का था, पर श्रीमंत सा० एक न माने, और श्री कलरैया जी के लिए भी थाली परोसने का आर्डर दिया, तब कलरैयाजी रुआँसे से होकर बोले—श्रीमंत सा० अबके तो माफ कीजिए, आगे से ऐसी गलती नहीं करूँगा, तब कहीं उन्होंने मुझे अपने घर लिवा ले जाने की इजाजत देते हुए कहा—देखो, यहाँ अंग्रेजी तरीका नहीं चलेगा, तुम्हें कल स्पष्ट शब्दों में अपने घर के निमंत्रण देने की बात कहनी चाहिए थी। घर लिवा ले जाते हुए रास्ते में श्री कलरैया जी बोले—एक-एक शब्द को पकड़ने वाला और बाल की खाल निकालने वाला श्रीमंत सा० जैसा दूसरा ऐसा आदमी मैंने आज तक नहीं देखा।

पर्यूषणपर्व की समाप्ति पर उन्होंने अच्छे सन्मान के साथ मुझे विदा किया। 'मझले भैया' की मृत्यु के पश्चात् जब में बनारस नहीं जा सका, और श्रीमंत सा० को मेरे घर पर रहने की बात ज्ञात हुई, उन्होंने पत्र द्वारा मझले भैया की मृत्यु पर शोक प्रकट किया और एक बार खुरई आने के लिए प्रेरणा की। मैं जब वहाँ पहुँचा, तो उन्होंने अपनी पाठशाला में रखने की अपनी मंशा प्रकट की। पर चूंकि घर पर रहना जरूरी था और गाँव की जिस पाठशाला में पढ़ा था, उसी में पढ़ाने के लिए संस्था के संचालकों के अति आग्रह से उन्हें अपनी स्वीकृति दे चुका था अतः आने में अपनी विवशता प्रकट कर वहाँ से वापिस चला आया।